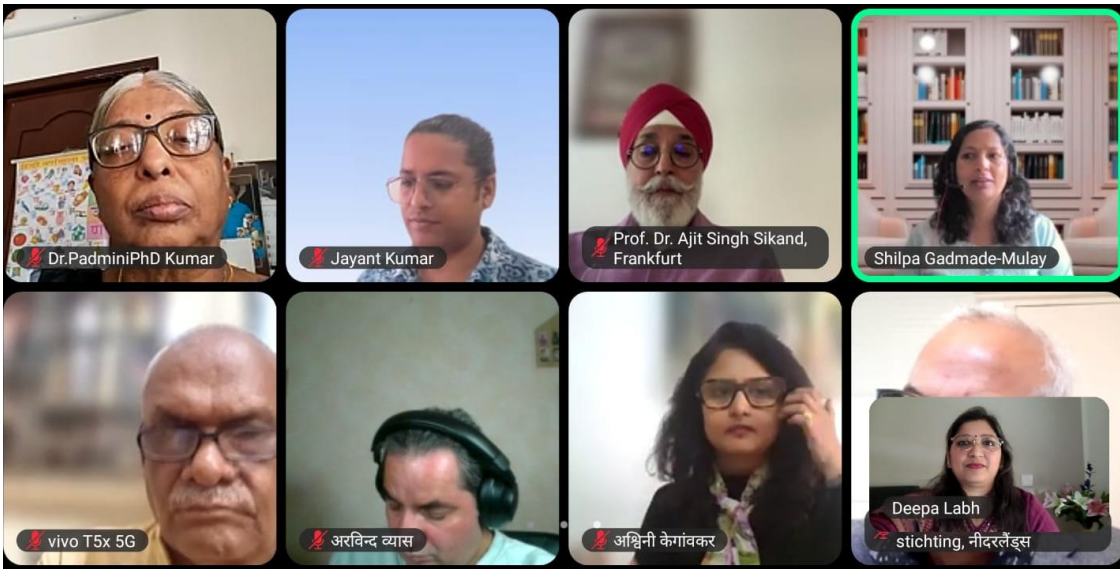


दीपान्विति

घटनाओं, विचारों और कहानियों की कड़ियाँ



बियोन्ड ब्रैकेट्स जर्मनी द्वारा आयोजित अंतरराष्ट्रीय आभासी संगोष्ठी

भाषा को मंच नहीं, घर में मान दें

भारतीय भाषाओं के भविष्य पर गहन विमर्श

----- दीपान्विति न्यूज डेस्क, बर्लिन

भारतीय भाषाओं की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि इसे अपने ही घर में उपेक्षा सहनी पड़ती है। हम बड़े-बड़े मंचों पर अपनी भाषाओं को महिमामंडित तो कर देते हैं, किन्तु अपने बच्चों को इससे जोड़ नहीं पाते। ऐसे कुछ अप्रिय सत्य उजागर करता एक अत्यंत महत्वपूर्ण विमर्श विगत शनिवार को आभासी पटल पर सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। बियोन्ड ब्रैकेट्स जर्मनी, नागरी लिपि परिषद, दिल्ली एवं यूरोपीय इकाइयों तथा साझा संसार फाउंडेशन के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस संगोष्ठी में फ्रैंकफर्ट (जर्मनी), मिलान (इटली), एवं भारत के प्रतिष्ठित शिक्षण एवं अन्य संस्थानों से सम्बद्ध विद्वानों ने विशिष्ट वक्ताओं के रूप में भाग लिया। भारतीय भाषाओं की यूरोप के विभिन्न देशों एवं भारत में वर्तमान स्थिति को उजागर करते हुए इन्हें भविष्य के लिए उपयोगी और रोजगारपरक बनाने के उपायों पर गहन विमर्श ने इस आयोजन को सार्थक व समृद्ध बनाया। इस अंतरराष्ट्रीय आभासी विमर्श का संचालन कर रही बर्लिन प्रवासी एवं बियोन्ड ब्रैकेट्स जर्मनी की संस्थापिका दीपा दिनेशनील ने विमर्श की विषयवस्तु रखते हुए कहा कि भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं, यह सभ्यता की स्मृति और भविष्य की सम्भावना होती है। उन्होंने पैल के समक्ष यह प्रश्न रखा कि क्या कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन अनुवाद, हर हाथ में स्क्रीन (सोशल मीडिया) और डिजिटल शिक्षा के इस युग में जहाँ तकनीकी विकास सामान्य-सी बात है, हमारी भाषाएँ भविष्य की दुनिया के लिए पर्याप्त रूप से तैयार हैं। भारत जैसे बहुभाषी देश में भाषाओं के सह-अस्तित्व, इनके तकनीकी सशक्तिकरण

और वैश्विक उपयोगिता पर केन्द्रित इस विमर्श में गेटे एवं माइन्ज़ विश्वविद्यालय में आधुनिक इंडोलॉजी के प्रोफेसर डॉ. अजीत सिंह सिकंद ने शब्द को गुरु बताया और लिपि को भाषा का परिधान कहा। गुरु नानक देव के प्रसंग से अपने वक्तव्य की शुरुआत करते हुए उन्होंने अपनी मातृभाषा को अपने-अपने घरों में अपनाने और उचित सम्मान देने की बात कही। स्वयं हिंदी, पंजाबी, जर्मन, अंग्रेजी जैसी भाषाओं में दक्ष प्रोफेसर सिकंद ने यूरोपीय देशों का उदाहरण देते हुए कहा कि अपनी भाषाओं के प्रति इन देशों का दृष्टिकोण अपनाने योग्य है। उन्होंने कहा कि भाषा तभी तक जीवित रह सकती है जब तक उसकी उपयोगिता सिद्ध होगी, अन्यथा उसे विलोप होने से रोका नहीं जा सकता है। अतः हमें ज़मीनी स्तर पर कार्य करने की आवश्यकता है, अपने-अपने घरों से शुरुआत करने की आवश्यकता है, अपनी भाषा का मान बढ़ाना हमारे अपने हाथों में है, किसी सरकार या संस्थान के हाथ में नहीं। राष्ट्रीय फैशन टेक्नोलॉजी संस्थान, पटना के टेक्सटाइल डिज़ाइन विभाग के सहायक प्रोफेसर एवं आईआईटी कानपुर से पीएचडी के शाधार्थी जयंत कुमार ने बिहार की विलुप्तप्राय होती लिपियों तिरहुता और कैथी की वर्तमान स्थिति से अवगत कराते हुए इसके भविष्य की संभावनाओं पर अपने विचार रखे। उन्होंने बताया कि यूनिकोड में मिथिलाक्षर उपलब्ध है किन्तु जानकारी के अभाव में उपयोग में प्रचलित नहीं है।

नाना की अंतिम यात्रा

राजकीय सम्मान के साथ अंतिम संस्कार

----- न्यूज डेस्क

प्रख्यात फ़िल्म कलाकार नाना पाटेकर की मृत्यु से समूचा देश स्तब्ध है। अकस्मात घटी इस घटना से देश-विदेश में बसे उनके प्रशंसकों के बीच शोक की लहर है। विगत 8 अक्टूबर को सुबह लगभग 5 बजे उन्हें गोवा के अस्पताल में मृत घोषित किया गया और उसी दिन देर शाम को पूरे राजकीय सम्मान के साथ पुणे, महाराष्ट्र में उन्हें अंतिम विदाई दी गई।

नाना पाटेकर एक अद्वितीय कलाकार के साथ-साथ एक प्रखर व्यक्तित्व थे जिनकी सादगी, सच्चाई, और समाज सेवा विस्मयकारी है। एक कलाकार के रूप में जिस प्रकार वे अपने किरदारों के प्रति ईमानदार थे, असल जीवन में भी वे सच्चे मानवीय गुणों के भण्डार थे। अपनी गैर-सरकारी संस्थान 'नाम फाउंडेशन' के द्वारा महाराष्ट्र के किसानों, महिलाओं, एवं गरीबों के लिए किए गए उनके समाज-सेवी कार्यों से महाराष्ट्र की जनता उनके प्रति अपार श्रद्धा और प्रेम का भाव रखती है। नाना ने कभी अपनी समाजसेवा का बखान नहीं किया, न कभी अपने आदर्शों से समझौता किया। जो बोला, दिल से बोला; जो किया मन का किया और उनकी यही बात उन्हें इस सिने-जगत में सबसे अलग और अनूठा बनाती है। उनकी मृत्यु पर भारत के प्रधानमंत्री समेत लगभग सभी बड़े नेताओं, अभिनेताओं एवं प्रमुख व्यक्तियों ने गहरा शोक प्रकट किया और भारत के लिए एक अपूरणीय क्षति बताया।

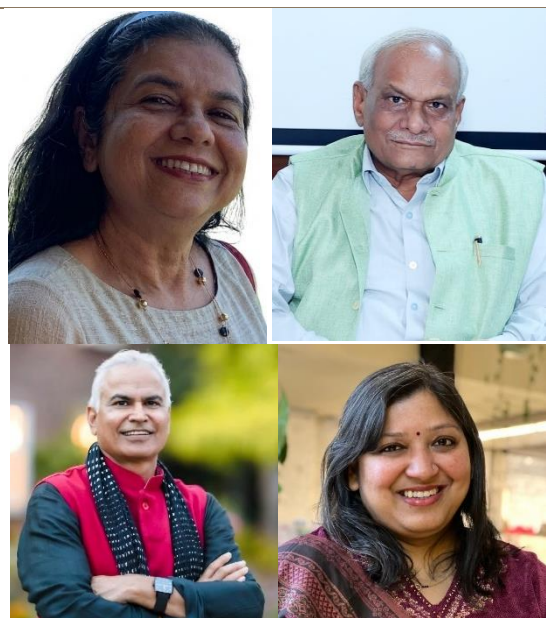


स्वर्गीय नाना पाटेकर

1 जनवरी 1951 – 8 अक्टूबर 2026



(दाएँ से बाएँ) प्रो. डॉ. अजीत सिंह सिकंद, शिल्पा गडमडे मुले, जयंत कुमार, रुद्रदेव देवुलपेल्ली

(ऊपर) उर्मिला चक्रवर्ती, हरिसिंह पाल,
(नीचे) रामातक्षक, दीपा दिनेशनील

भारतीय भाषाओं के भविष्य पर गहन विमर्श जारी...

उन्होंने इन लिपियों को कंप्यूटरिकृत करने की दिशा में अपने प्रयासों की जानकारी देते हुए कहा कि पुरातन शिलालिखों, अभिलेखों को पढ़ने के लिए समय-समय पर विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती रहती है और उनका यह प्रयास ऐसे ही विशेषज्ञों के लिए तकनीकी सुविधा देगा। मराठी भाषा के लिए जर्मनी में महाराष्ट्र सरकार का प्रतिनिधित्व कर रही फ्रैंकफर्ट प्रवासी कानूनी विशेषज्ञ शिल्पा गडमडे मुले ने मराठी भाषा के सन्दर्भ में जर्मनी में हो रहे प्रयासों की जानकारी देते हुए बताया कि हम सभी के सम्मिलित प्रयासों से भाषा को भविष्य के लिए आसानी से तैयार किया जा सकता है। उन्होंने कहा की हमें एक युनिफॉर्म सिलेबस बनाने की आवश्यकता है जिससे विदेशों में आने वाली नयी पीढ़ी को व्यवस्थित रूप से उनकी मातृभाषा या हिंदी सिखाई जा सके। मिलान, इटली से विदुषी उर्मिला चक्रवर्ती ने इटली में हिंदी की स्थिति से मंच को अवगत कराया। उर्मिला स्वयं एक भाषा-विशेषज्ञ हैं एवं मिलान की स्टेट यूनिवर्सिटी में लिंग्विस्टिक और

कल्चरल मीडिएशन की शिक्षिका रही हैं। उन्होंने कहा कि भाषा के भविष्य की योजना बनाने के लिए इसके ऐतिहासिक सन्दर्भों को समझना आवश्यक है। इतिहास में भाषा को समृद्ध और विकसित करने के प्रयासों को समझ कर उसे वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखते हुए ही भविष्य के लिए तैयार करना श्रेयस्कर होगा। जर्मनी में दक्षिण भारतीय भाषाओं और हिंदी के लिए सेतु का कार्य कर रहे भाषा-संस्कृति के अनन्य सेवी फ्रैंकफर्ट प्रवासी रुद्रदेव देवुलपेल्ली ने कहा कि भाषा को सुरक्षित रखने की शुरुआत हमें अपने घरों से करनी होगी। उन्होंने जर्मनी के सांस्कृतिक एवं सार्वजनिक मंचों पर भारतीय भाषाओं के प्रयोग करने पर बल देते हुए कहा कि बच्चों को उपहार के रूप में पुस्तक देने की परम्परा से शुरुआत की जा सकती है। विमर्श की अध्यक्षता नागरी लिपि परिषद के महामंत्री हरिसिंह पाल ने की और इसे नागरी परिषद के यूरोपीय समन्वयक रामातक्षक का स्नेहिल सान्निध्य मिला। हरिसिंह पाल ने विमर्श को अत्यंत सार्थक और प्रासंगिक बताते हुए सभी वक्ताओं के

विचारों और सुझावों की सराहनी की। उन्होंने मंच को नागरी लिपि परिषद के कार्यों की विस्तृत जानकारी देते हुए यूरोपीय इकाइयों की सक्रियता की खूब सराहना की। साझा संसार फाउंडेशन के संस्थापक नीदरलैंड प्रवासी रामातक्षक ने इस विमर्श को भाषा-जगत के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण बताया। भारतीय भाषाओं के भविष्य और उससे जुड़ी उनके द्वारा संपादित पुस्तकों की जानकारी देते हुए उन्होंने बताया कि ये पुस्तकें भविष्य के शोधार्थियों के लिए महत्वपूर्ण दस्तावेज़ सिद्ध हो सकती हैं। गाज़ियाबाद से जुड़ी रश्मि चौबे ने नागरी प्रार्थना प्रस्तुत कर नागरी परिषद के उद्देश्यों से मंच को अवगत कराया। नीदरलैंड से नागरी परिषद की प्रभारी अश्विनी केगांवकर ने मंच से जुड़े सभी वक्ताओं एवं श्रोताओं का धन्यवाद ज्ञापन करते हुए इस विमर्श को समय की मांग कहा। हिंदी शिक्षण के मूर्धन्य विजय कुमार मल्होत्रा ने विषय चुनाव और वक्ताओं के विचारों को व्यावहारिक बताते हुए आयोजन को सफल और महत्वपूर्ण बताया। ☺

तीन राष्ट्रीय पुरस्कार, अनेकों फ़िल्मफ़ेयर पुरस्कार

पुरस्कारों से लैस पद्मश्री नाना पाटेकर की असली पूंजी उनकी समाजसेवा थी!



----- दीपा दिनेशनील

नाना पाटेकर ने अपनी पहली ही फिल्म गमन (1978) से अपने अभिनय का जलवा दिखाना शुरू कर दिया था। लगभग दस सालों तक हिंदी एवं मराठी सनेमा में छोटे-मोटे करदार निभाने के बाद वर्ष 1989 में आई क्राइम-ड्रामा 'परिंदा' के लए उन्हें सर्वश्रेष्ठ सहायक कलाकार का पहला राष्ट्रीय पुरस्कार और फ़िल्मफ़ेयर पुरस्कार मला। इससे पूर्व मीरा नायर की 'सलाम बॉम्बे' के

लिए उन्हें खूब सराहा गया था। पुनः उन्हें क्रांतिवीर (1995) में सर्वश्रेष्ठ अभिनेता और अग्रिसाक्षी (1997) में सर्वश्रेष्ठ सहायक अभिनेता के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। फिल्म अंगार (1992) के लिए सर्वश्रेष्ठ खलनायक, क्रांतिवीर (1995) के लिए सर्वश्रेष्ठ अभिनेता और अपहरण (2006) के लिए सर्वश्रेष्ठ खलनायक का फ़िल्मफ़ेयर पुरस्कार भी नाना के नाम रहा। इसके अलावा उन्हें कई स्टारस्क्रीन पुरस्कार और ज़ी सिने पुरस्कारों से भी नवाज़ा गया। नाना पाटेकर की अधिकतर फ़िल्में जैसे अंधा युग, प्रहार, तिरंगा, खामोशी द म्यूजिकल, शक्ति: द पावर, राजनीति अधिकतर पुरस्कारों में नामित की गयीं। हिंदी फ़िल्मों के अलावा उनकी मराठी फ़िल्मों ने भी सफलता के कीर्तिमान गढ़े। उनकी मराठी फ़िल्में डॉ. प्रकाश बाबा आमटे – द रियल हीरो (2015) और

नटसम्राट (2017) के लिए उन्हें सर्वश्रेष्ठ अभिनेता का फ़िल्मफ़ेयर मराठी पुरस्कार दिया गया। इनके अतिरिक्त उन्हें महाराष्ट्र राज्य फ़िल्म पुरस्कार, बंगाल फ़िल्म पत्रकार संगठन पुरस्कार जैसे पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। सनेमा को उनके अतुलनीय योगदान के लए उन्हें वर्ष 2013 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। नाना पाटेकर इरफान खान के साथ एकमात्र ऐसे अ भनेता हैं, जिन्होंने सर्वश्रेष्ठ अ भनेता, सर्वश्रेष्ठ सहायक अ भनेता और सर्वश्रेष्ठ खलनायक की श्रेणियों में फ़िल्मफ़ेयर पुरस्कार जीते हैं। नाना पाटेकर अकसर पुरस्कारों में जीती गई धनराश और फ़िल्मों की फ़ी ज़रूरतमंदों या कसी चैरिटेबल संस्था को दान कर दिया करते थे। मानव सेवा, पर्यावरण संरक्षण उनके लए धर्म समान था।



नाना पाटेकर: एक इंसान, अनेक किरदार; हर किरदार में बाकमाल!

मौत से क्या डरना, इसे तो आना है: नाना पाटेकर

एक सच्चे देशभक्त और बेहद नेक इंसान को भावभीनी श्रद्धांजलि

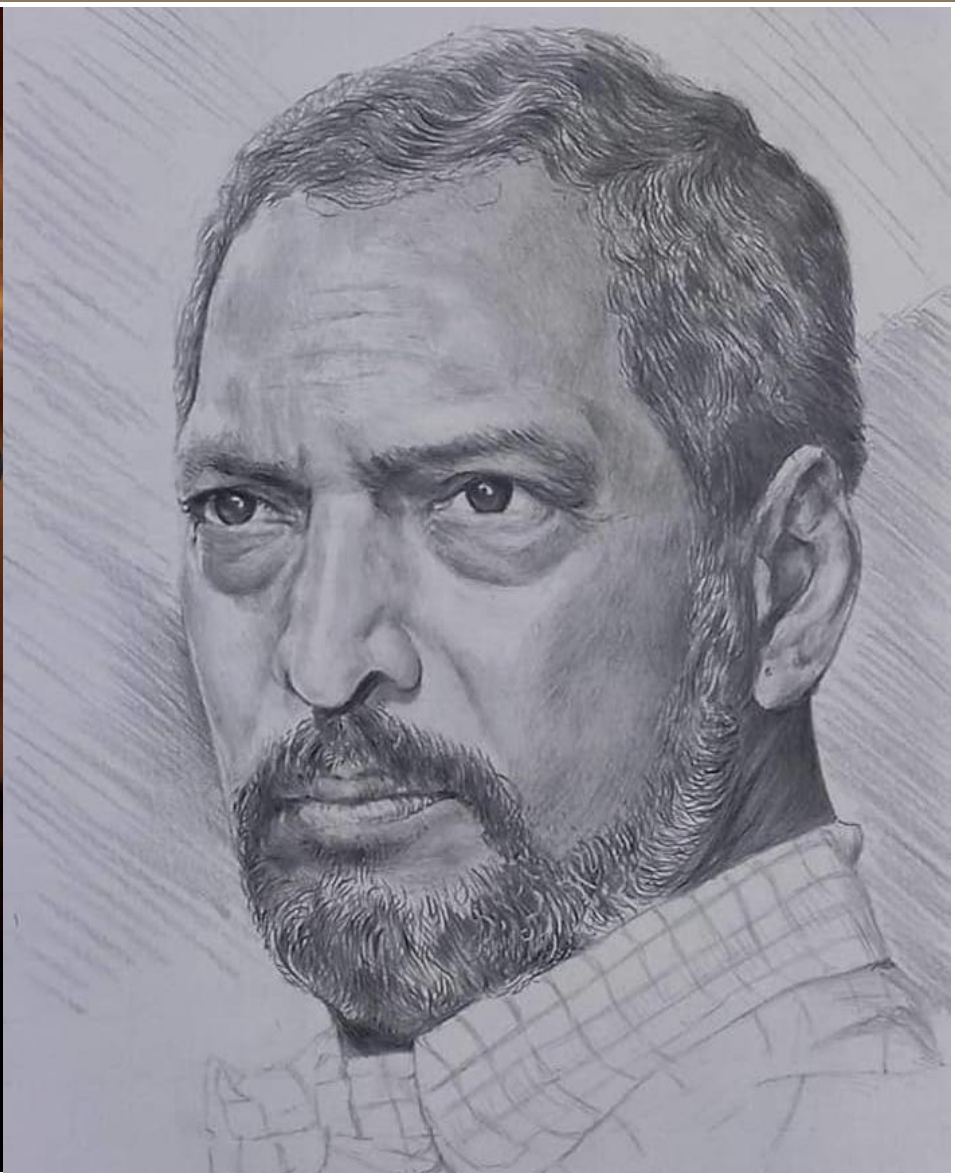
----- दीपा दिनेशनील

नाना पाटेकर का जाना एक व्यक्तिगत क्षति-सा महसूस हुआ। उनकी एक्टिंग की हमेशा से गहरी प्रशंसक रही हूँ, किन्तु हाल के दिनों में उनके व्यक्तित्व ने भी खासा प्रभावित किया था। उनका बेधड़क-बेबाक अंदाज़ हमेशा अचरज में डाल देता था – ऐसे इंडस्ट्री में जहाँ अधिकतर कलाकार चाटुकारिता और झूठी प्रशंसा में लगे रहते हैं, नाना निडर होकर अपना मत रखते थे। सही को सही, गलत को गलत बोलने की हिमाकत उन्होंने एक-दो बार नहीं, बार-बार की है। अभी हाल ही में फिल्म ‘ओ रोमियो’ के प्रमोशन के दौरान अन्य कलाकारों को पहुँचने में देरी के कारण दो घंटे के इंतज़ार के बाद उनका आयोजन स्थल से नाराज़ होकर चले जाना सुर्खियाँ बनी थीं। तब भी नाना के गुस्से को खबर बनाया गया, बाक़ी कलाकारों का देर से पहुँचना मानो जायज़ था। इस खबर से मैं सोचने को मजबूर थी कि भारत में समय की पाबन्दी को कब गंभीरता से लिया जाएगा! नाना जैसे दो टूक बात करने वाले लोग उन्हें नहीं सुहाते जो आत्ममुग्धता में लिप्त रहते हैं और अपनी प्रशंसा को ही अपने जीवन का आधार मानते हैं। नाना इनसे अलग थे – न प्रशंसा से उड़े, ना आलोचनाओं से डिगे। और इसीलिए एक कलाकार से अधिक, उनका साधारण जीवन, उनका चरित्र, जीवन के प्रति उनका व्यावहारिक दृष्टिकोण उन्हें विशेष बनाता है।

**हमारे बाद महफ़िल में अफ़साने बय़ाँ होंगे
बहारें हमको ढूँढ़ेंगीं, न जाने कम कहाँ होंगे**

इसमें कोई दो राय नहीं कि कलाकार वे बाकमाल थे। उनकी पहली फिल्म जो मुझे याद रह गयी, परिंदा है। फिल्म में ‘अन्ना’ के उस किरदार से इतनी नफ़रत हो गयी थी कि उसका धू-धू कर जलना अच्छा लगा था। तब न एक्टिंग की समझ थी, न सिनेमा की, फिर भी नाना पाटेकर की अदाकारी ने उस किरदार से घृणा करने को मजबूर कर दिया था। बाद में जब उस सीन की शूटिंग के दौरान हुए हादसे का पता चला जिससे उबरने में उन्हें लगभग एक साल का वक़्त लग गया था, जिसमें दो महीने हॉस्पिटल में रहना पड़ा था – यह सब जान कर एक अभिनेता के रूप में उनके प्रति आदर बढ़ गया था। फिर प्रहार, तिरंगा, क्रांतिवीर जैसी फिल्मों में वे ‘एंग्री यंग मैन’ के साथ-साथ देशभक्ति का नया जोश लेकर पर्दे पर आए। प्रहार में एक सैनिक की भूमिका निभाने के लिए पहले उन्होंने तीन साल की मिलिट्री ट्रेनिंग ली जो बाद में

कारगिल युद्ध के दौरान असल जीवन में काम आया। सेना में शामिल हो देश के लिए लड़ने की बात हो या महाराष्ट्र के सूखे से परेशान किसानों का दर्द हो, नाना पाटेकर ने केवल फिल्मों में ही नहीं असल जीवन में भी महानायक की भूमिका अदा की है। फ़िल्म राजू बन गया जेंटलमैन में अपने छवि के विपरीत किरदार कर उन्होंने अपनी अदाकारी में नया आयाम जोड़ा था। अधिकतर क्रूर विलेन बनने वाले नाना कभी सरफ़िरे शक्ती पति (अग्निसाक्षी) तो कभी स्किल्ज़ोफ़्रेनिक (वजूद) आशिक बन कर पर्दे पर डर का ऐसा माहौल बना देते थे कि एक पल के लिए सब-कुछ सच लगते लगता था – उनसे डर लगने लगता था। किसी किरदार का ऐसा सजीव चित्रण दर्शकों को अचंभित करने वाला था मगर उनके लिए स्वाभाविक-सा था। उनकी फिल्म ‘शक्ति-द पॉवर’ देख कर पहली बार मेरे मन में एक पिता के लिए ऐसी भावना जागी थी कि उस किरदार को खुद गोली मारने का मन किया था – इतना स्वाभाविक अभिनय न जाने कैसे कर लेते थे नाना। आज जब उनकी फिल्मोग्राफी पर नज़र गई तो एहसास हुआ कि मैंने उनकी अधिकतर हिंदी फ़िल्में देखी हैं। मराठी न जानने के कारण देख नहीं सकी किन्तु उन फिल्मों की लिस्ट भी लम्बी है और वहाँ भी प्रशंसकों की बहुतायत है। अनेकों गंभीर और नकारात्मक किरदारों के बाद वेलकम और हाउस फुल जैसी फिल्मों में कॉमेडी करना उनके प्रशंसकों के लिए एक सुन्दर सरप्राइज था। ‘अब तक छप्पन’ में छप्पन एक्काउन्टर करने वाला एक पुलिस अफसर टेटपुन्जिये गुंडों के साथ आलू-प्याज बेचेगा, नाच-गाने करेगा इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। किन्तु नाना पाटेकर इस भूमिका में भी पसंद किए गए। फिर आया एक बहुत ही पढ़ा-लिखा हेड ऑफ़ द मेडिकल एंड रिसर्च इंस्टिट्यूशन का किरदार – प्रोफ़ेसर डॉ. बलराम भार्गव के रूप में। ‘द वैक्सीन वॉर’ के प्रमोशन के दौरान एक साक्षात्कार में नाना ने अपने अभिनय का सारा श्रेय निर्देशक विवेक रंजन अग्निहोत्री को देते हुए कहा था, “मुझ जैसे देहाती आदमी को ऐसे पढ़े-लिखे किरदार के लिए सोचना ही आश्चर्य की बात थी। मगर विवेक ने मुझपर जो भरोसा दिखाया तो मुझे यह करना ही था और मुझे गर्व है कि मैं इस फिल्म का हिस्सा बन सका।” नाना ने जिस प्रतिबद्धता के साथ वह किरदार निभाया था, वास्तव में इसे नाना के अलावा कोई और नहीं कर सकता था। ऐसा ही उनकी वनवास के लिए भी कहा जा सकता है। उम्र और समय की माँग के हिसाब से फिल्मों का चयन, अपने किरदार के साथ ऐसा तारतम्य स्थापित कर लेना कि उनके अलावा उस किरदार में किसी और की कल्पना भी न की जा सके – नाना यकीनन ऐसे ही कलाकार थे। टैक्सी नम्बर 9211 मैंने नाना के लिए ही देखी थी और सच पूछिए तो नाना ही इस फिल्म की जान थे। ...शेष अगले पृष्ठ पर



कभी फिल्मों के पोस्टर चिपकाने वाला नाना एक दिन भारतीय सिनेमा का सबसे प्रभावशाली चेहरा बन गया! तुम याद आओगे नाना!

एक सच्चे देशभक्त और बेहद नेक इंसान को भावभीनी श्रद्धांजलि

----- दीपा दिनेशनील

नाना के डायलॉग, डायलॉग कम, ज़िन्दगी का फ़लसफ़ा अधिक लगते हैं। जैसे,

“बड़े खुदगर्ज़ होते हैं हम, जिसे पसंद करते हैं उसकी बुराइयाँ भूल जाते हैं और जिससे नफ़रत करते हैं उसकी अच्छाइयाँ भूल जाते हैं।” – वेडिंग एनिवर्सरी

“ज़िन्दगी के एक मोड़ पर जाकर लोग अक्सर यही सोचते हैं, काश ज़िन्दगी फिर से जीने मिल जाती।” – यात्रा

“सरफ़िरे ही इतिहास लिखते हैं। समझदार उसे पढ़ते हैं।” - वेडिंग एनिवर्सरी

अपनी एक फ़िल्म ख़ामोशी-द म्यूजिकल के लिए उन्होंने कहा था कि यह फिल्म मेरे लिए चुनौती थी। मैं देखना चाहता कि जिस आवाज़ ने मुझे इतनी प्रतिष्ठा दिलाई है, अगर वही आवाज़ मेरे साथ न रहे तो मेरी अदाकारी कैसी होगी।” कठिन बचपन, संघर्ष पूर्ण जीवन के बाद फिल्मों में मिली सफलता और शोहरत नाना की सादगी और उनके भीतर के इंसान को कभी ख़त्म नहीं होने दिया। वे पहले सपोर्टिंग कलाकार थे जिसने अपनी शर्तों पर अपनी मर्ज़ी से काम करना चुना और लोगों ने उनकी शर्तों पर उनके साथ काम किया। बाहर से सख्त और गुस्सैल दिखने वाले नाना के भीतर एक बेहद सौम्य, दयालु और मस्तीखोर इंसान बसता था। नाना के साथ काम कर चुके सभी छोटे-बड़े कलाकार नाना को इसी बात के लिए पसंद या नापसंद करते थे। उनकी स्पष्टवादिता कभी-कभी लोगों को चुभ जाया करती थी मगर इससे नाना को कोई फर्क नहीं पड़ता था। नाना को खाना पकाने का और प्रेम से बिठाकर खिलाने का बड़ा शौक था। वे अक्सर अपने पुणे के पास उनके गाँव स्थित फ़ार्म हॉउस में या फिल्म

सेट पर अपने हाथों से भोजन बनाते थे और सबको खिला कर तब स्वयं खाते थे। खेती करना, मवेशी पालन, और गाँव का सादा जीवन उनकी दिनचर्या का हिस्सा था। वे केवल काम के लिए मुंबई या शूट लोकेशन पर जाते थे, अन्यथा उन्हें शहर में रहना पसंद नहीं था। फिल्मों में करोड़ों चार्ज करने वाला नाना अपने घर के काम स्वयं करना पसंद करते थे – जैसे गेहूँ पिसवाना, घर के काम आदि। एक बार किसी बड़े प्रोड्यूसर ने उनसे यह सवाल किया तो उन्होंने बताया था कि दुनिया के लिए मैं नाना पाटेकर हूँ, अपने घर में तो मैं नान्या ही रहूँगा। घर में सबसे छोटा हूँ, मैं नहीं करूँगा तो कौन करेगा।”

सादा जीवन, सादा लिबास, सूती/खादी का कुर्ता, अंगोछा और चेहरे पर मद्धिम सी मुस्कान – शक्ल साधारण थी किन्तु अत्यंत प्रभावशाली थी। हिंदी और मराठी सिनेमा के लिए उनका जाना अपूरणीय क्षति है। किन्तु नाना अपनी सिनेमा में सदैव जीवित रहेंगे; हमारी स्मृतियों में सदैव जीवित रहेंगे और भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय बन कर सदैव चमकेंगे।

कुछ लोग जाने के बाद
तस्वीरों में रह जाते हैं; कुछ
अपनी कही बातों में, और
कुछ ऐसे होते हैं जिन्हें याद
कर हम अंतर्मन से थोड़े और
सच्चे हो जाते हैं!